ज्ञान शांति मैत्री

हिंदी शिक्षण अधिगम केंद्र

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

द्वारा

'सिनेमा और साहित्य का अंतर्संबंध'

विषय पर दिनांक: 28 सितंबर, 2018 को आयोजित विशेष व्याख्यान

प्रतिवेदन/रिपोर्ट

हिंदी शिक्षण अधिगम केंद्र द्वारा 'सिनेमा और साहित्य का अंतर्संबंध' विषय पर 28-09-2018 को महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय वर्धा के ग़ालिब सभागार में विशेषज्ञ व्याख्यान का आयोजन किया गया। जिसमें श्री अखिलेख दास वरिष्ठ छायाकार (सिनेमा) ने अपना व्याख्यान दिया। इसकी अध्यक्षता साहित्य विद्यापीठ की अधिष्ठाता प्रो. प्रीति सागर ने किया। संचालन प्रो. अवधेश कुमार ने किया तथा विश्वविद्यालय की तरफ़ डॉ संजय तिवारी ने आभार ज्ञापित किया।

श्री अखिलेश दास जी ने कहा कि मैं अपनी बात शुरू करूँ उससे पहले यह कह देना ठीक रहेगा कि अब तक सिर्फ सिनेमा ने ही साहित्य के उपयोग, इसके रूपांतरण और इसमें मिलावट करने की कोशिश की है। इसके उलट साहित्य ने फिल्मों के उपयोग और मिलावट की कोशिश की हो, इसका कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है। फिर प्रश्न उठता है कि आखिर ऐसा क्यों हुआ होगा ?

उन्होने कहा कि जब हम सिनेमा का संबंध साहित्य से जोड़ते हैं तो विभिन्न आयामों से इनकी आंतरिक सम्बन्धों के तानेबाने व परतों को खोलना होता है। सिनेमा ने अपने आरंभिक चरण में साहित्य से ही प्राण-तत्व लिया। यह उसके भविष्य के लिए ज़रूरी और स्वाभाविक भी था। दरअसल सिनेमा और साहित्य की उम्र में जितना अधिक अंतर है, उतना ही अंतर उनकी समझ और सामर्थ्य में भी है। विश्व सिनेमा अभी सिर्फ 117 साल का हुआ है। और अगर साहित्य की उम्र से इसकी तुलना की जाय तो यह अभी शिशु ही है। लेकिन यह तो कहना ही होगा कि शिशु होने के बावजूद यह समाज के नब्ज पकड़ने में

सक्षम है। इसके साथ आप सूक्ष्म पर्यवेक्षण करें तो पाएँगे कि अब सिनेमा की बौध्दिकता इतनी विकसित तो हो ही गई है कि वह साहित्य का आधार छोड़कर धीरे-धीरे स्वायत्त हो रहा है । अगर आप देखें तो सिनेमा ने अपने प्रारम्भिक दौर में साहित्य के विभिन्न विधाओं को आधार बनाकर अपनी यात्रा शुरू की। पहले पहल सिनेमा ने पौराणिक कथाओं को आधार बनाया। सन् 1912 में मुंबई के रामचन्द्र गोपाल टोन द्वारा निर्मित फ़िल्म पुंडलीक को अपार सफलता मिली। यह फ़िल्म महाराष्ट्र के ख्यातिप्राप्त हिंदू संत के जीवन पर आधारित रामाराव किर्तीकर द्वारा लिखित नाटक पर आधारित थी। इसके बाद दादा साहब फाल्के द्वारा निर्मित राजा हरिश्चंद्र फिल्म प्रदर्शित हुई । हालांकि हरिश्चंद्र को भारतीय सिनेमा में पहली फिल्म मानी गई है लेकिन इसके पूर्व पुंडलीक फिल्म का निर्माण हो चुका था। परंतु दुर्भाग्य से इस फिल्म का छायाकर भारतीय न होकर विदेशी होने के कारण इसे भारतीय सिनेमा में प्रथम स्थान नहीं मिला। पौराणिक चरित्रों को केंद्र में रखकर कई फिल्में बनाई गईं, जैसे—भक्त प्रहलाद, शिव महिमा ,विष्णु अवतार ,रामायण, उत्तर रामायण, कृश्ञ्जंम, कालिया मर्दन, संत तुकाराम, संत नामदेव, भक्त प्रह्लाद आदि। सन् 1931 में भारत में सवाक् फ़िल्मों का आरंभ आर्देशिर ईरानी द्वारा निर्मित फ़िल्म आलम आरा से हो गया था। भारतीय सिनेमा का स्वरूप बहुत तेज़ी से बदलने लगा था। दर्शक अधिक से अधिक सवाक् फ़िल्मों की प्रतीक्षा करने लगे। अब दर्शकों का रुझान बदला तो फिल्म पौराणिक घटनाओं से हटकर सामाजिक समस्याओं पर भी बनने लगीं। समाज को केंद्र में रखकर कई बहुचर्चित फिल्में बनीं जो समाज को नई दिशा देने में सक्षम थीं । ऐसी कुछ सामाजिक यथार्थ और शिक्षाप्रद फ़िल्मों का नाम याद कीजिए, जैसे—मंथन ,खानदान ,ममता ,किस्मत , नादान,नौकर, जमीन ,दोस्त, ज्वार-भाटा आदि। सामाजिक फिल्मों के साथ-साथ ऐतिहासिक विषयों पर भी फिल्में बनने लगीं, जैसे-सिकंदर, अनार कली, मुगल-ए -आजम आदि। सामाजिक फ़िल्मों के' इस दौर में रोमांटिक फिल्में दर्शकों को ज्यादा पसंद आने लगीं और इस तरह रोमांटिक फिल्मों का एक नया दौर शुरू हो गया । रोमांटिसिज़्म ने भारतीय फिल्मों को इतना प्रभावित किया कि आज भी वो फिल्म के मूल तत्व है । लेकिन इस पूरे दौर में, इतने चरण और बदलाव के बावजूद जो बात हर जगह मौजूद है वह है सिनेमा की साहित्य पर निर्भरता। अध्यक्षीय वक्तव्य देते हुए प्रो. प्रीति सागर ने सिनेमा और साहित्य के संबंध को स्त्री-जीवन और उसके चित्रण के संदर्भ में देखा।